सच्चे गुरु परभावों को हेय बताते हैं

भाई ! वीतरागी प्रभु का मार्ग या धर्म का मार्ग जगत से बिलकुल जुदा है। पर की दया पालने का भाव आता है। वह शुभ राग है, परन्तु पर की दया कोई पाल नहीं सकता; क्योंकि वह परवस्तु है, वह अपने परिणमन में स्वतंत्र है। उसकी अवस्था का कर्त्ता वह स्वयं है। इसकारण दूसरा कोई ऐसा कहे कि 'मैं इसको जीवित रखता हूँ, बचाता हूँ या मारता हूँ' तो यह मान्यतायें मिथ्या है, भ्रम है; ऐसा माननेवाला मूढ है, अज्ञानी है।

भाई ! तू तो ज्ञान है न ? तू जानने की भूमिका में रहे ह्न ऐसा तेरा स्वरूप है। जाननेवाला आत्मा जानने के सिवा और कर ही क्या सकता है ? क्या वह राग कर सकता है ? राग या विकार का तो तेरे स्वभाव में अभाव है; तथापि तू दया, दान आदि परद्रव्यों के भावों को व स्वयं को एकरूप करके अनादि से मिथ्यात्व में सो रहा है, ये तेरी भारी भूल है, अज्ञान है।

भगवान आत्मा अनादि से अपनी वस्तु को भूलकर, कृत्रिम, क्षणिक, उपाधिमय, पुण्य-पाप के भाव को अपना मानकर अपने ही कारण अज्ञानी हुआ है। उसको श्री गुरु परभाव का भेद करके बताते हैं कि भाई ! तू चैतन्यस्वरूप ज्ञानसम्पदा से भरा हुआ भण्डार है, इस राग या विकल्प से तेरी वस्तु भिन्न है। तू अपना स्वरूप देख ! तेरा स्वरूप तो ज्ञाता-दृष्टा है, राग तेरा स्वरूप नहीं है; ऐसा कहकर श्रीगुरु परभाव का विवेक कराते हैं। भाई ! जो राग से भिन्न आत्मा का ज्ञान करावे, वे ही यथार्थ गुरु हैं। आत्मज्ञान की अनुभवमय दशा जिनको हुई है, वे सच्चे गुरु है। ऐसे सच्चे गुरु परभावों को हेय बताते हैं। वे कहते हैं कि भाई! ज्ञान-आनंद तेरा सत्यस्वरूप है; पुण्य-पाप के कृत्रिम विकल्प तेरी चीज नहीं है। **– प्रवचनरत्नाकर भाग-2, पृष्ठ-93**

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन

प्रतिदिन प्रातः ६:४५ बजे अवश्य सुनें।

साधना चैनल आपके यहाँ न आता हो तो श्री पंकज जैन (साधना चैनल) से 09312506419 नम्बर पर सम्पर्क करें।

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 22 259 अंक : 7

प्रवचनसार पद्यानुवाद

ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार

द्रव्यसामान्य प्रज्ञापन अधिकार

गुण से गुणान्तर परिणमें द्रव्य स्वयं सत्ता अपेक्षा।
इसलिए गुणपर्याय ही हैं द्रव्य जिनवर ने कहा।।१०४।।
यदि द्रव्य न हो स्वयं सत् तो असत् होगा नियम से।
किम होय सत्ता से पृथक् जब द्रव्य सत्ता है स्वयं।।१०५।।
जिनवीर के उपदेश में पृथक्त्व भिन्नप्रदेशता।
अतद्भाव ही अन्यत्व है तो अतत् कैसे एक हों।।१०६।।
सत् द्रव्य सत् गुण और सत् पर्याय सत् विस्तार है।
तदरूपता का अभाव ही तद्-अभाव अर अतद्भाव है।।१०७।।
द्रव्य वह गुण नहीं अर गुण द्रव्य ना अतद्भाव यह।
सर्वथा जो अभाव है वह नहीं अतद्भाव है।।१०८।।
परिणाम द्रव्य स्वभाव जो वह अपृथक् सत्ता से सदा।
स्वभाव में थित द्रव्य सत् जिनदेव का उपदेश यह।।१०९।।
पर्याय या गुण द्रव्य के बिन कभी भी होते नहीं।
द्रव्य ही है भाव इससे द्रव्य सत्ता है स्वयं।।११०।।
पूर्वोक्त द्रव्यस्वभाव में उत्पाद सत् नयद्रव्य से।
पर्यायनय से असत् का उत्पाद होता है सदा।।१११।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

निर्ममत्व का चिंतन करना चाहिये

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 26 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

बध्यते मुच्यते जीवः सममो निर्ममो क्रमात्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन निर्ममत्वं विचिन्तयेत्।।26।।

ममतासहित जीव और ममतारहित जीव अनुक्रम से बंधता है और मुक्त होता है; इसलिए सम्पूर्ण प्रयत्न से निर्ममत्व का विशेषरूप से चिन्तन करना चाहिए।

(गतांक से आगे .....)

प्रश्न : विकल्प तो आते ही हैं; उनका हम क्या करें?

उत्तर : भाई ! विकल्प तेरे स्वरूप में से नहीं आते हैं, भक्ति में विकल्प उत्पन्न होते हैं; किन्तु तू तो अनादि-अनंत ज्ञानमूर्ति है, तुझमें तो विकल्प का त्रिकाल अभाव है। अपनी अज्ञानता से तू विकल्पों को स्वयं खड़ा करता है और कहता है कि विकल्प आ जाते हैं।

शरीर, विकल्प आदि मेरे नहीं हैं और मैं उनका स्वामी नहीं हूँ। बस ! यही भेदज्ञानरूप ज्योति केवलज्ञान का कारण है; परन्तु लोगों को इस सच्ची और अच्छी बात की खबर नहीं है। लोग तो मात्र अंधों की तरह दौड़ रहे हैं, उन्हें सही मार्ग की खबर नहीं है, वे तो बस विपरीत मार्ग की ओर दौड़े जा रहे हैं।

भगवान आत्मा तो सत्चित् स्वरूप है । सत् माने शाश्वत और चित् माने ज्ञानानन्द का अखण्ड भण्डार। सत्चित् स्वरूप भगवान आत्मा में रागादिभाव नहीं है और भगवान आत्मा भी रागादिभावों में नहीं है। इसतरह अन्तरंग में राग से निरन्तर भेदज्ञान करना ही राग और ज्ञान के मध्य करौंत (आरी) चलाने की कला है।

जिसप्रकार जीवद्रव्य अस्तित्ववाला है; उसीप्रकार शरीररूप जड़द्रव्य भी

अस्तित्ववाला है। शरीर अनंत पुद्गल परमाणुओं का स्कंध है, वह अपनी वर्तमान योग्यतानुसार ही परिणमन करता है, उसमें जीव किसी भी प्रकार से फेरफार नहीं कर सकता।

यहाँ पूज्यपादस्वामी कहते हैं कि जिसे अतीन्द्रिय आनन्द की पूर्णतारूप मोक्ष की अभिलाषा है, उसे भेदज्ञान की भावना करनी चाहिये। राग और वीतराग इन दोनों स्वभावों को पहिचानना चाहिये।

गुणभद्रस्वामी ने आत्मानुशासन में भी कहा है कि जबतक मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो जाती, तबतक मोक्षार्थी को परद्रव्य से हटकर स्वभाव में ही एकाग्र होने की भावना करनी चाहिये। इससे परद्रव्य का लक्ष्य सहज ही छूट जायेगा।

जो मोक्ष की अभिलाषा नहीं करते हैं, उन्हें तो परद्रव्यों में ही एकत्वबुद्धि वर्तती है; लेकिन जो पूर्णानन्द स्वरूप मोक्ष की प्राप्ति करना चाहते हैं, उन्हें परद्रव्यों से नाता तोड़कर स्वभाव से नाता जोडने का प्रयत्न करना चाहिये। आत्मवस्तु तो अविनाशी शुद्ध ही है; किन्तु अज्ञानी उसमें पुण्य-पाप एवं रागादि की मिलावट कर अपनत्वबुद्धि करता है, जिससे उसका परद्रव्यों का संग बना रहता है। वह असंग नहीं हो पाता; क्योंकि असंग होने का उपाय एकमात्र स्वरूप एकाग्रता ही है।

मोक्ष कह्यो निज शुद्धता, जिन पावे ते पंथ।
समझायो संक्षेपमां, सकल मार्ग निर्ग्रन्थ।।

मोही जीव कर्म बांधता है और निर्मोही जीव मुक्त होता है; इसलिये हे भव्यों ! तुम पूरे यत्न से निर्ममभाव जगाओ। शुभाशुभ विकारी भावों से 'यह मैं हूँ और ये मेरे हैं' ऐसा जो मिथ्यात्वभाव होता है, वह मिथ्यात्वभाव ही जीव को संसार में परिभ्रमण कराता है तथा मैं तो एक शुद्ध चैतन्यघन आनन्दकन्द आत्मा हूँ, विकल्प मात्र भी मेरा नहीं है ह्न ऐसा निर्ममभाव संसार परिभ्रमण छुड़ाकर जीव को मुक्ति में ले जाता है; इसलिये जिसे एकमात्र मोक्ष की ही इच्छा है, उसे सर्व प्रयत्नपूर्वक राग से संबंध तोड़कर स्वभाव से संबंध जोडना चाहिये अर्थात् उग्र प्रयत्नपूर्वक अन्तर्मुख दृष्टि करके निर्ममभाव जगाना चाहिये।

अरे भाई ! प्रभु कहते हैं कि तू स्वयं ही परमेश्वर है, परमशक्ति का सत्व है।

तू विकल्पों का संबंध छोड़ और निज परमेश्वर के साथ संबंध जोड़ ह्न सर्वज्ञ परमेश्वर वीतरागदेव त्रिलोकीनाथ का यही संदेश है।

हे जीव ! तू अपने ध्रुव स्वभाव के साथ सम्बन्ध जोड़ और राग के साथ सम्बन्ध तोड़; किन्तु ये काम बिना प्रयत्न के नहीं होगा, इसके लिये तुझमें घनी जागृति एवं प्रगाढ़ प्रयत्न चाहिये।

अरे भाई ! तुझमें क्या कमी है, जो तुझे शरीर, धन, कुटुम्ब आदि परद्रव्यों की ओर ताकना पड़े ? तू अपनेआप में परिपूर्ण है; फिर परद्रव्यों की आशा क्यों करता है ? कहा भी है कि '**आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधा रस पीजे, आशा औरन की मत कीजे।**' चैतन्यमूर्ति आत्मा आनन्द अमृत से परिपूर्ण है, अन्तर में प्रयत्न बढ़ेगा तो आनंदरस प्राप्त होगा, बाहर में कहाँ रस है ?

जिसप्रकार कुत्ता घर-घर रोटी की आशा रखता है, उसीप्रकार अनादि से यह जीव भी ऐसी आशा रखता है कि कोई मुझे बड़ा कहे, धनवान कहे, बुद्धिमान कहे, मान देकर बुलावे; इसतरह अनादि काल से यह जीव पर की ओर ही देखता आया है, इसने स्वयं के निधान की ओर कभी नजर ही नहीं डाली। यदि एक बार भी उस चैतन्य निधान पर नजर डाले तो ऐसी खुमारी चढ़ती है कि वह उतरती ही नहीं है। **(क्रमशः)**

पुण्य और पाप वस्तुतः आस्रव और बंध के ही अवान्तर भेद हैं। इन्हें पृथक् से कथन करने का एकमात्र उद्देश्य इनकी ओर विशेष ध्यान आकर्षित करना ही है, कारण की सामान्यजन इनके समझने में विशेष गलतियाँ करते हैं। वे पुण्य को भला और पाप को बुरा समझ लेते हैं; क्योंकि पुण्य से मनुष्य व देव गति की प्राप्ति होती है और पाप से नरक व तिर्यंच गति की।

उनका ध्यान इस ओर नहीं जाता कि चारों गतियाँ संसार हैं और संसार दुःखरूप ही है। पुण्य और पाप दोनों संसार के ही कारण हैं। संसार में प्रवेश कराने वाले पुण्य-पाप भले कैसे हो सकते हैं। पुण्य-पाप बंधरूप हैं और आत्मा का हित अबंध (मोक्ष) दशा प्राप्त करने में है।

यद्यपि पाप की अपेक्षा पुण्य को भला कहा गया है; किन्तु मुक्ति के मार्ग में उसका स्थान अभावात्मक ही है। **ह्न ती. महावीर और उनका सर्वो. तीर्थ, पृष्ठ : 95**

परमात्मा कौन है ?

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की सातवीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्म-रसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है –

णिस्सेसदोसरहिओ केवलणाणाइपरमविभवजुदो।
सो परमप्पा उच्चइ तव्विवरीओ ण परमप्पा ॥७॥

नि:शेष दोष से जो रहित है और केवलज्ञानादि परम वैभव से जो संयुक्त है, वह परमात्मा कहलाता है; उससे विपरीत परमात्मा नहीं है।

(गतांक से आगे ...)

यहाँ कोई कहे कि ह्न शुद्ध आत्मा को तो जान लिया; परन्तु अब क्या करना है ? तो ऐसा पूछने वाले ने शुद्धात्मा को जाना ही नहीं। शुद्ध कारणपरमात्मा को जानकर उसकी प्रतीति करनेवाले के सामने 'क्या करना' ह्न ऐसा प्रश्न ही नहीं रहता। उस कारणपरमात्मा का आश्रय और भावना करना यही कर्त्तव्य है। कारणपरमात्मा तो त्रिकाल है; किन्तु जब उस कारण को कारणरूप से श्रद्धा में लिया तब कार्य प्रगट हुआ। जिसको कारणपरमात्मा की प्रतीति नहीं, उसके लिये तो कारणपरमात्मा है ही कहाँ ? उसे तो उसका अस्तित्व ही भासित नहीं हुआ। जहाँ अन्तर में झुककर स्वभाव को स्वीकार किया, वहाँ उस कारण के आश्रय से कार्य प्रगट हो गया। कारणपरमात्मा की भावना से कार्य परमात्मा दशा प्रगट होती है। स्वयं जागृत हुआ और स्वभाव की श्रद्धा की, तब कहा कि अहो ! मैं तो त्रिकाल ऐसा कारणपरमात्मा ही हूँ। उसकी श्रद्धा-ज्ञान करके जितनी एकाग्रता की, उतना कार्य प्रकट हुआ; किन्तु अज्ञानी कहता है कि बाहर की सामग्री हो तो कार्य प्रगट हो।

यहाँ कहते हैं कि अन्तर के ध्रुव कारणपरमात्मा में से कार्य प्रगट होता है। कारणपरमात्मा की भावना ही परमात्मदशा प्रगट करने का कारण है; अन्य कोई

कारण है ही नहीं। कार्य को जानने पर कारण की प्रतीति भी साथ में होना चाहिये। जो ऐसे कारण को न जाने और बाहर के कारण से केवलज्ञानरूपी कार्य होना माने, उसने तो कार्य को भी नहीं जाना और कारण को भी नहीं जाना। कार्य की पहिचान में कारण की पहिचान भी गर्भित है। ऐसे कारणपरमात्मा की प्रतीति सहित केवली भगवान को माने तो ही केवली भगवान को वास्तव में पहिचाना कहा जाय।

यहाँ अरहन्त भगवान के स्वरूप की पहिचान करवा रहे हैं। अरहन्त को पहिचाने बिना 'णमो अरिहंताणं' कहे तो इससे धर्म का लाभ नहीं हो सकता। जिसे अरहन्त के गुणों की पहिचान नहीं, उसे अपना आत्मा कैसा होता है ह्न इसकी भी पहिचान नहीं; भान बिना स्मरण करे तो शुभभाव से पुण्य तो होगा; परन्तु धर्म नहीं होगा।

जो अरहन्त परमात्मा हैं, वे भी पहले तो संसार में ही थे; किन्तु बाद में आत्मा का भान करके अरहन्त हुये। आत्मा का स्वभाव त्रिकाल निरावरण, नित्यानन्द, एकस्वरूप कारणपरमात्मा है ह्न ऐसे अपने आत्मा की भावना से जो अरहन्तदशा प्रगट होती है, उसका नाम कार्यपरमात्मा है। प्रत्येक आत्मा त्रिकाल निरावरण कारणपरमात्मा है। जैसा अरहन्त देव का आत्मा है, वैसा ही मेरा आत्मा शक्तिरूप से है; ऐसे अपने आत्मा को शक्तिरूप से पहिचान कर उसकी भावना करना ही परमात्मदशा प्रगट करने का उपाय है।

सर्वज्ञ के ज्ञान में एकसमय में तीनकाल सहित लोकालोक ज्ञात होते हैं। जगत में उनका कोई कर्त्ता नहीं है, सभी पदार्थ अनादि-अनन्त स्वयंसिद्ध हैं। आत्मा की पर्याय में क्षणिक विकार है; किन्तु वह उसका मूल स्वभाव नहीं है, उस विकार से रहित त्रिकाल एकरूप ध्रुवशक्ति का चैतन्यपिण्ड आत्मा ही कारणपरमात्मा है, उसकी श्रद्धा, ज्ञान और एकाग्रता करने पर पूर्ण परमात्मदशा प्रगट होती है।

एकसमय में लोकालोक को जाननेवाली सर्वज्ञदशा कहाँ से प्रगट हुई ? परनिमित्त अथवा विकार में से वह दशा प्रगट नहीं हुई, अल्पदशा का अभाव हुआ उसमें से भी सर्वज्ञदशा प्रगट नहीं हुई; अन्तर में पूर्णशक्ति ध्रुवरूप से पड़ी है, उसी में से सर्वज्ञदशा प्रगट हुई है। जैसे चौसठ पहरी चरपराहट पीपल में ही भरी है; उसी

में से प्रगट होती है, कहीं बाहर से नहीं आती है; उसीप्रकार चैतन्य में सर्वज्ञदशा कहाँ से आती है ? अन्दर प्रत्येक आत्मा ध्रुवस्वभावी निरपेक्ष आनन्दकन्दशक्ति से परिपूर्ण है, उस शक्ति की प्रतीति करके उसमें एकाग्र होने पर परमात्मदशा प्रगट होती है। परमात्मदशा तो कार्य हैं और उसका कारण आत्मा का नित्यानन्द स्वभाव है, उसे कारणपरमात्मा कहते हैं। अरहन्तदशा प्रगट हुई वह कार्य है, उस कार्य को पहिचान लेने पर उसका कारण भी साथ ही साथ पहिचानने में आ जाता है। इसके अतिरिक्त बाहर का कारण माने तो उसने परमात्मदशा को पहिचाना ही नहीं।

देखो ! यह जैनदर्शन तो वस्तुस्वभाव का दर्शन है। जैसा वस्तुस्वभाव है, वैसा ही सर्वज्ञ ने जाना और वैसा ही उनकी वाणी में कहा गया। जैनदर्शन कोई सम्प्रदाय, बाड़ा या कल्पना नहीं है। यह तो सर्वज्ञ का मार्ग है। जिसे इन्द्र भी मानते हैं, गणधर भी आदर करते हैं, चक्रवर्ती भी सेवा करते हैं, सन्त अनुभव करते हैं ह्न यह मार्ग अनादि-अनन्त है। जो अनन्त तीर्थंकर हुए और होंगे उन सबका यही मार्ग है।

वर्तमान में भी महाविदेह में भगवान श्री सीमन्धर आदि तीर्थंकर विराज रहे हैं; वे भी ऐसे ही कारणपरमात्मा के आश्रय से अरहन्तदशा को प्राप्त हुए हैं।

महाविदेह में भगवान विराजते हैं, उनका पाँच सौ धनुष प्रमाण शरीर है। वे केवलज्ञान सहित समवशरण में विराजमान हैं। उन भगवान ने किसप्रकार केवलज्ञान प्राप्त किया उसकी यह बात है। यह बात भगवान को पूछने जाना पडे ह्न ऐसी नहीं है। अपने आत्मस्वभाव की पहिचान होने पर उसका निर्णय हो जाता है। निजकारणपरमात्मा को पहिचान कर उसकी भावना करना ही कार्यपरमात्मा होने का उपाय है।

विकार और शरीर में सुख मानकर उसकी भावना करना तो संसार का कारण है। विकार तथा देहादि से निरपेक्ष ध्रुव परमात्मा की भावना करना केवलज्ञान का कारण है। चैतन्यस्वभाव की 'भावना' ही मोक्षमार्ग है। भावना अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों से युक्त।

अरहन्त भगवान कार्य परमात्मा हैं, हमें उनके कारण को पहिचानना चाहिये; क्योंकि कारण को पहिचाने बिना कार्य की सच्ची पहिचान नहीं हो सकती। यदि राग के कारण केवलज्ञान को माने तो उसने केवलज्ञान को पहिचाना ही नहीं। सर्वज्ञ

भगवान स्वयं निजकारणपरमात्मा की भावना से परमात्मा हुये और जगत में भी यह घोषणा की कि तुम भी शक्तिरूप से कारणपरमात्मा हो, उसकी श्रद्धा-ज्ञान करके उसी में एकाग्रता करो। किसी बाहर के आश्रय से तुम्हारी परमात्मदशा नहीं होगी। तुम्हारी परमात्मदशा तो अन्दर के स्वभाव के आश्रय से ही प्रगट होगी, बाहर से नहीं। इसी विधि से अनंत जीव परमात्मा हुये हैं और जगत को भी वही विधि बताई। जिसको परमात्मा बनना हो, वह अपनी आत्मा को पहिचान कर, उसी में एकाग्र होवे; इसके बिना जन्म-मरण टलेगा नहीं। भगवान को पहिचानते ही, भगवान बनने की विधि भी ज्ञात हो जाती है।

जो ऐसे कारणपरमात्मा की भावनारूप विधि से भगवान हुए, वे ही भगवान अरहन्त देव हैं, उनके आहारादि नहीं होते। ऐसे कार्य परमात्मारूप अरहन्तदेव में जैसे गुण हैं, वैसे गुण किसी अन्य में नहीं है। जिनमें अरहंतों से विपरीत गुण हों, वे सब देवाभास हैं, कुदेव हैं। वे भले ही देवत्व के अभिमान में मुख फुलाये हों, फिर भी वे वास्तविक सच्चे देव नहीं हैं, अपितु संसारी ही हैं, उनका कथित मार्ग उन्मार्ग ही है, मोक्षमार्ग नहीं।

यह जीव प्रत्येक क्षण परिपूर्ण चैतन्यमूर्ति कारणपरमात्मा है। उसको जो नहीं मानता और कार्य प्रगट होने के लिए किसी बाहरी कारण को मानता है, वह देव नहीं है और उसका कहा हुआ मार्ग मोक्षमार्ग नहीं; अपितु उन्मार्ग है। ऐसे कुदेवादि को मानने से मिथ्यात्व होता है। यहाँ तो ऐसा कहा है कि जो सर्वज्ञ के बताये हुये भगवान को नहीं मानता, उसकी तो व्यवहार श्रद्धा भी सच्ची नहीं है। **(क्रमशः)**

भगवान और भगवानदास

अरे भाई, पर भगवान या पर्यायरूप भगवान की शरण में जानेवाले भगवानदास बनते हैं, भगवान नहीं। यदि स्वयं की पर्याय में भगवान बनना हो तो जिन भगवान की ही शरण में जाना होगा, उसे ही जानना पहिचानना होगा, उसमें ही अपनापन स्थापित करना होगा, उसका ही ध्यान धरना होगा, उसमें ही समा जाना होगा ह्न इस बात को कभी भूलना नहीं चाहिये।

ह्न आत्मा ही है शरण, पृष्ठ : 203

शक्तियों का संग्रहालय : भगवान आत्मा

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम समयसार नामक ग्रन्थाधिराज पर परमपूज्य आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने 'आत्मख्याति' नामक संस्कृत टीका लिखी है। उसके अन्त में परिशिष्ट के रूप में अनेकान्त का विस्तृत वर्णन करते हुये आत्मा की 47 शक्तियों का वर्णन किया है, साथ ही अनेक कलश भी लिखे हैं। उन पर गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने समय-समय पर अतिमहत्त्वपूर्ण प्रवचन किये हैं, जो पाठकों के लाभार्थ क्रमश: प्रस्तुत हैं।

(गतांक से आगे .....)

अब आत्मा का अनेकान्तस्वरूप वैभव अद्भुत-आश्चर्यकारक है, इस अर्थ का 273 वाँ काव्य कहते हैं -

(पृथ्वी)

इतो गतमनेकतां दधदित: सदाप्येकता-
मित: क्षणविभंगुरं ध्रुवमित: सदैवोदयात्।
इत: परमविस्तृतं धृतमित: प्रदेशैर्निजै-
रहो सहजमात्मनस्तदिदमद्भुतं वैभवम्॥

(रोला)

एक ओर से एक स्वयं में सीमित अर ध्रुव।
अन्य ओर से नेक क्षणिक विस्तारमयी है॥
अहो आतमा का अद्भुत यह वैभव देखो।
जिसे देखकर चकित जगतजन ज्ञानी होते॥

अहो ! आत्मा का तो यह सहज अद्भुत वैभव है कि एक ओर से देखने पर वह अनेकता को प्राप्त है और दूसरी ओर से देखने पर सदा एकता को धारण करता है। एक ओर से देखने पर क्षणभंगुर है और दूसरी ओर से देखने पर सदा उसका उदय होने से ध्रुव है, एक ओर से देखने पर परम विस्तृत है और दूसरी ओर से देखने पर अपने प्रदेशों से धारण कर रखा हुआ है।

पर्यायदृष्टि से देखने पर आत्मा अनेकरूप दिखाई देता है और द्रव्यदृष्टि से देखने पर एकरूप; क्रमभावी पर्यायदृष्टि से देखने पर क्षणभंगुर दिखाई देता है और सहभावी गुणदृष्टि से देखने पर ध्रुव; ज्ञान की अपेक्षावाली सर्वगत दृष्टि से देखने पर परम विस्तार को प्राप्त दिखाई देता है। ऐसा द्रव्य-पर्यायात्मक अनंत धर्मवाला वस्तु का स्वभाव है। वह स्वभाव अज्ञानियों के ज्ञान में आश्चर्य प्रकट करता है कि यह तो असंभव-सी बात है। यद्यपि ज्ञानियों को वस्तु स्वभाव में आश्चर्य नहीं होता फिर भी उन्हें कभी नहीं हुआ ह्न ऐसा अभूतपूर्व-अद्भुत परमानंद होता है और इसलिये आश्चर्य भी होता है।

परमात्मपुराण में दर्शन व ज्ञान को अद्भुतरस कहा है। वहाँ कहा है कि ह्न आत्मा की एकसमय की दर्शन और ज्ञान ह्न इन दोनों पर्यायों में से एक दर्शनोपयोग की पर्याय लोकालोक को, सम्पूर्ण सत् को अभेदरूप से देखती है। उसमें यह जीव है और यह अजीव है ह्न ऐसा भेद नहीं है और तो ठीक है, 'यह है' ऐसा भेद भी नहीं है, जबकि दूसरी एकसमय की ज्ञान पर्याय सबको भिन्न-भिन्न करके जानती है। इसप्रकार जिससमय दर्शन की पर्याय सबको भिन्न किये बिना देखती है, उसीसमय ज्ञान की पर्याय सबको भिन्न-भिन्न जानती है। यही आत्मा का सहज अद्भुत रस है।

अब यहाँ आत्मा का वैभव क्या है इस बात को विशेष कहते हैं ह्न एक ओर पर्यायदृष्टि अर्थात् अनेक को देखने की दृष्टि से देखें तो पर्याय में अनेकता दिखाई देती है अर्थात् अनंत पर्यायें दिखती है; क्योंकि अनंत गुणों की अनंत पर्यायें हैं। दूसरी ओर से अर्थात् द्रव्यदृष्टि से, वस्तु की दृष्टि से देखें तो आत्मा एकरूप दिखाई देता है तथा आत्मा सदैव एकता को धारण करता है ह्न ऐसा कहा है।

यदि वस्तु में अनित्यपना हो ही नहीं तो कार्य तो अनित्यपने में ही होता है न! यह द्रव्य ध्रुव है, शुद्ध है ह्न ऐसा कार्य तो पर्याय में होता है न ! अनित्य पर्याय ही तो नित्य का निर्णय करती है।

यहाँ कहते हैं कि ह्न एकतरफ से वस्तु स्वयं से क्षणभंगुर है, क्षण-क्षण में नाश होनेवाली है ह्न ऐसा दिखता है। देखो ! यहाँ आत्मा को पर के कारण क्षण-भंगुर नहीं कहा। 'पर्याय क्रमश: होती है' - इस अपेक्षा से आत्मा को क्षणभंगुर कहा है और इस क्षणभंगुरता को भी अपना ही वैभव कहा है।

इसप्रकार पर्याय में अनेकता व क्षणभंगुरता तथा द्रव्य में एकता और ध्रुवता है ह्न ऐसा वर्णन किया। अब तीसरे बोल में क्षेत्र से वर्णन करते हैं।

'एक ओर से देखने पर आत्मा परम विस्तृत है' अर्थात् आत्मा एक समय में लोकालोक को जानता है, इससे उसका ज्ञान सर्वगत हो जाता है, तीन लोक में व्याप्त हो जाता है और तीन लोक में व्याप्त हो जाने से विशाल दिखता है। आत्मा अभी साधक दशा में भी ऐसा ही है; क्योंकि साधक जीव की एकसमय की ज्ञानपर्याय भी लोकालोक को, छह द्रव्यों को जानती है; इसलिये एक ओर से जानें-देखें तो ऐसा जानते हैं कि ह्न जानने की अपेक्षा से आत्मा के क्षेत्र का इतना विस्तार है।

अब कहते हैं कि ह्न आत्मा को द्रव्य अपेक्षा से देखें तो उसने मात्र अपने क्षेत्र को धारण किया है अर्थात् वह अपने क्षेत्र में रहता है। परवस्तुओं को तो आत्मा ने कभी अपने प्रदेशों में धारण किया ही नहीं है।

इसप्रकार पर्याय एवं क्षेत्र के दो-दो बोल कहे हैं ह्न 1. पर्याय में अनेकता है 2. पर्याय क्षणभंगुर है तथा 1. क्षेत्र सर्वगत है 2. अनादि से वह अपने प्रदेश में ही है। यही आत्मा का सहज अद्भुत वैभव है ह्न ऐसा इस कलश में कहा है। **(क्रमशः)**

आगामी कार्यक्रम .....

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के प्रभावना योग से नवनिर्मित
'अध्यात्मतीर्थ' आत्मसाधना केन्द्र, दिल्ली में
श्री आदिनाथ दि. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
सोमवार, दिनांक 7 फरवरी से रविवार, दिनांक 13 फरवरी, 2005 तक

श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट के तत्त्वावधान में आयोजित इस महोत्सव में जिनमुखोद्भूत वाग्वादिनी की अजस्र धारा प्रवाहित करने के लिये विश्वविश्रुत तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** जयपुर, लब्धख्याति **डॉ. उत्तमचन्दजी जैन** सिवनी, **पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल** जयपुर, **ब्र. सुमतप्रकाशजी** खनियांधाना, **पण्डित विमलदादा झांझरी** उज्जैन, **पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी** आगरा एवं **पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री** देवलाली पधार रहे हैं।

इस महोत्सव की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल **ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री** के सान्निध्य में **ब्र.धन्यकुमारजी बेलोकर** एवं **पण्डित शांतिकुमारजी पाटील** सम्पादित करेंगे।

आप सभी जिनधर्म रसिक इस अवसर पर पधारकर अवश्य धर्मलाभ लेवें।

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : ज्ञानी का व्यवहार प्रतिक्रमण भी बंध का कारण है ह्न ऐसा कहने का क्या प्रयोजन है ?

उत्तर : निश्चय दृष्टिवाले ज्ञानी का व्यवहार प्रतिक्रमण भी बंध का कारण है ह्न ऐसा कहकर व्यवहार का आलंबन छुड़ाया है। जिनेन्द्र का स्मरण, भक्ति, स्वाध्याय, मंदिर निर्माण, प्रतिष्ठा कराना, शास्त्र रचना, व्रत-तप आदि अनेक प्रकार के शुभ आलंबन में चित्त का भ्रमण होने से इनका भी आलंबन छुड़ाकर शुद्धस्वरूप के स्तम्भ से चित्त को बांधने का प्रयोजन है अर्थात् शुद्धस्वरूप के आलंबन कराने का ही प्रयोजन है।

प्रश्न : पंचास्तिकाय की गाथा-172 में कहा है कि भिन्न साधन-साध्यरूप व्यवहार को न माने तो मिथ्यादृष्टि है ह्न इसका अर्थ स्पष्ट कीजिये ?

उत्तर : साधक अवस्था में शुद्धता के अंश के साथ भूमिकाप्रमाण शुभ राग भी आता है, यहाँ उसका ज्ञान कराया है तथा उपचार से उस राग को व्यवहार साधन कहा है; किन्तु उस व्यवहार के आश्रय से निश्चय की प्राप्ति होती है ह्न ऐसा उसका आशय नहीं है। चूंकि साधक को दोनों साधन एकसाथ वर्तते हैं; अतः उनका ज्ञान कराने के लिये यह कथन है। साधक को ये दोनों एक साथ वर्तते हैं ह्न ऐसा जो न माने वह मिथ्यादृष्टि है ह्न ऐसा समझना चाहिये। फिर भी रागादि व्यवहार साधन के अवलम्बन से निश्चय साधन प्राप्त हो जायेगा ह्न ऐसा समझना भूल है।

प्रश्न : भगवान द्वारा कहे गये व्यवहार का पालन करने पर भी अभव्य को आत्मा का अवलम्बन नहीं होता, जबकि तिर्यंच सम्यग्दृष्टि को व्यवहार नहीं है, फिर भी आत्मा का अवलम्बन है ह्न ऐसा क्यों है ?

उत्तर : हाँ ! यहाँ खूबी तो यह है कि जैसा व्यवहार जिनेन्द्र देव ने देखा और कहा है, वैसे व्यवहार का पालन करने पर भी अभव्य जीव आत्मा का आश्रय नहीं लेता, उसको निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रकट नहीं होते। दूसरे के द्वारा कहे

गये व्यवहार की बात नहीं है, यहाँ तो सर्वज्ञ द्वारा कहे गये व्यवहार का भी निश्चय में निषेध होता है।

प्रश्न : निश्चय के द्वारा व्यवहार का निषेध होता है; इसलिये व्यवहार निषेध्य है ह्न ऐसा विचार करके व्यवहार को छोड़ दें और निश्चय नहीं हो तो ?

उत्तर : आत्मा में झुके तब व्यवहार हेय हो जाता है। 'हेय करूँ, हेय करूँ' - ऐसा करता है, यह तो विकल्प है। निश्चय में जाते ही व्यवहार हेय हो जाता है, निषेध सहज होता है।

प्रश्न : निश्चयनय कितने प्रकार का कहा जाता है ?

उत्तर : यथार्थ में तो त्रिकाली द्रव्य यही निश्चय है। राग को जब व्यवहार कहना हो, तब निर्मल पर्याय को उससे भिन्न बताना, उसको निश्चय कहा जाता है। कर्म को व्यवहार कहना हो, तब राग को निश्चय कहा जाये। अनुभूति की पर्याय व्यवहार है, तो भी द्रव्य की ओर ढली है; इससे उसको निश्चय कहकर अनुभूति को ही आत्मा कहा है। इसप्रकार अपेक्षा से निश्चयनय के अनेक भेद हो जाते हैं।

प्रश्न : मुक्ति और संसार में अन्तर नहीं है ह्न ऐसा कौन पुरुष कहते हैं ? और किस नय से कहते हैं ?

उत्तर : शुद्धनिश्चयनय से मुक्ति और संसार में अन्तर नहीं है। अहाहा ! कहाँ पूर्णानन्द की प्रगटतारूप मुक्त दशा और कहाँ अनन्त दु:खमय संसारपर्याय ! तथापि उस मुक्ति और संसार में कोई अन्तर नहीं है ह्न ऐसा शुद्धतत्त्व के रसिक पुरुष कहते हैं; क्योंकि संसार भी पर्याय है और मुक्ति भी पर्याय है। यह पर्याय आश्रय करने योग्य नहीं है, इस अपेक्षा से मुक्ति और संसार में अन्तर नहीं है ह्न ऐसा शुद्धतत्त्व के रसिक अनुभवी पुरुष कहते हैं। नियमसार गाथा 50 में कहा है कि शुद्धनिश्चयनय के बल से उदयभाव तो हेय है ही; किन्तु उपशमादि की निर्मल पर्याय भी हेय है। शुद्धनिश्चयनय के बल से चारों भाव ह्न विभावभाव है, हेय हैं ह्न ऐसा कहा है।

प्रश्न : समयसार की टीका करने से मलिनता नाश होती है क्या ?

उत्तर : टीका करने के विकल्प से मलिनता नाश नहीं होती। हाँ, टीका के काल में दृष्टि के बल से अन्तर में एकाग्रता बढ़ती जाती है, उससे मलिनता नाश होती है। तब उपचार करके टीका से मलिनता नाश होती है ह्न ऐसा व्यवहार से कहा है।

समाचार दर्शन –

आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सम्पन्न

1. देवलाली (महा.) : यहाँ ब्र. रमाबेन तथा अशोकभाई एवं भरतभाई पारेख की तरफ से शांताबेन की स्मृति में दिनांक 27 से 31 दिसम्बर, 2004 तक सिद्ध परमेष्ठी पूजन-विधान एवं आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर तत्त्ववेत्ता **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल**, जयपुर के प्रवचनसार ग्रन्थ पर मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त **पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री**, **पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा** एवं **पण्डित हेमचन्दजी** के प्रवचन एवं कक्षाओं का लाभ भी मिला।

विधान के सम्पूर्ण कार्य **ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री** के निर्देशन में कराये गये।

2. सिद्धायतन (द्रोणगिरि-म.प्र.) : यहाँ श्री गुरुदत्त कुन्दकुन्द कहान दि.जैन स्वा. मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में 25 से 31 दिसम्बर, 04 तक आ. शिक्षण-शिविर सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर **डॉ. उत्तमचन्दजी जैन** सिवनी द्वारा समयसार पर, **पण्डित राजेन्द्रजी** जबलपुर द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक पर एवं **ब्र. यशपालजी जैन** जयपुर द्वारा गुणस्थान विवेचन एवं लघु जैन सि. प्रवेशिका पर मार्मिक प्रवचन एवं कक्षाओं के माध्यम से महती धर्मप्रभावना हुई। इसके अतिरिक्त **पण्डित महेन्द्रजी** बरायठा एवं **पण्डित निर्मलकुमारजी जैन** सागर का भी लाभ उपस्थित साधर्मियों को प्राप्त हुआ।

शिविर के मध्य लघुतत्त्वस्फोट पर विद्वत संगोष्ठी का आयोजन किया गया। अतिथि विश्राम गृह का शिलान्यास श्रीमान सेठ गुलाबचन्दजी जैन, सागर ने किया।

शिविर में 47 शक्ति विधान का आयोजन हुआ। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य **पण्डित राजकुमारजी शास्त्री**, बांसवाड़ा ने कराये। प्रतिदिन रात्रि में समन्तभद्र शिक्षण संस्थान के छात्रों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये। **ह्न पीयूष जैन**

डॉ. भारिल्ल डॉक्टरों के सम्मेलन में....

मुम्बई : यहाँ श्री तेरापंथ भवन, कान्दीवली में दिनांक 7 एवं 8 जनवरी, 05 को देश-विदेश से उपस्थित 2000 डॉक्टरों का एक सम्मेलन सानन्द सम्पन्न हुआ; जिसमें डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल का **आत्मा, कर्म और पुनर्जन्म** विषय पर मार्मिक व्याख्यान हुआ।

सम्मेलन में डॉ. भारिल्ल की 'मैं स्वयं भगवान हूँ' नामक अनुपम कृति एवं 'आत्मा, कर्म और पुनर्जन्म' लेख की प्रतियाँ भी सभी को वितरित की गई।

ब्र. यशपालजी द्वारा धर्म प्रभावना

जबलपुर (म.प्र.) : यहाँ दिनांक 1 से 6 जनवरी, 05 तक श्री महावीर दि. जैन मंदिर में ब्र. यशपालजी जैन, जयपुर द्वारा दोनों समय पंचास्तिकाय ग्रन्थ पर मार्मिक प्रवचन हुये। सायंकालीन बालकक्षा में पाठशाला के विद्यार्थियों को आपका मार्मिक उद्बोधन भी मिला।

ज्ञातव्य है कि दि. 7 जनवरी,05 को बीना (म.प्र.) में भी आपका मार्मिक प्रवचन हुआ।

बाल संस्कार शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

1. **दिल्ली :** श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट, दिल्ली के तत्त्वावधान में श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान, उज्जैन द्वारा आत्मसाधना केन्द्र में होनेवाले पंचकल्याणक प्रतिष्ठा की पूर्व बेला में बाल संस्कार शिविर दिनांक 26 दिसम्बर, 04 से 02 जनवरी, 05 तक सानन्द सम्पन्न हुआ। शिविर में दिल्ली एवं उत्तरप्रदेश के 13 स्थानों पर कक्षाओं, प्रवचनों एवं आकर्षक कार्यक्रमों द्वारा लगभग 1200 बच्चों एवं 900 प्रौढों ने धर्मलाभ प्राप्त किया।

शिविर में दिल्ली महानगर के **कैलाशनगर** में पं. राहुल शास्त्री एवं पं. किशोर शास्त्री, **सीताराम बाजार** में पं. निखिल शास्त्री, **उस्मानपुर** में पं. गुलाबचन्दजी बीना एवं पं. अनुज शास्त्री, **शास्त्रीनगर** में पं. अर्पित शास्त्री तथा **शंकरनगर** में पं. प्रशान्त शास्त्री द्वारा धर्मप्रभावना की गई। इसी क्रम में उत्तरप्रदेश के **मेरठ शहर** में पं. जितेन्द्र शास्त्री एवं पं. आशीष शास्त्री, **खतौली** में पं. धीरज शास्त्री एवं पं. अतुल शास्त्री, **मुजफ्फरनगर** में पं. रोहन शास्त्री एवं पं. मुकुन्द शास्त्री, **कुरावली** में पं. प्रमेश शास्त्री, **खेकड़ा** में पं. अंकुर शास्त्री एवं पं. एलमचन्द शास्त्री, **बड़ौत** में पं. निपुण शास्त्री एवं पं. रमेश शास्त्री, **भोगाँव** में पं. अरहंत शास्त्री तथा **गंगेरू** में पं. अभय शास्त्री द्वारा तत्त्वप्रचार किया गया।

शिविर का संचालन पं. संदीपजी शास्त्री बांसवाड़ा, पं. नागेशजी पिड़ावा, पं. संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा, पं.सुरेन्द्रजी शास्त्री शाहगढ़ एवं पं. सचिनजी शास्त्री बरेली ने किया।

पुरस्कार वितरण 9 जनवरी,05 को श्री दिनेश जैन, समता टाइम्स के करकमलों से हुआ।

2. **सेमारी (राज.) :** यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान मुमुक्षु मण्डल के तत्त्वावधान में दिनांक 24 से 31 दिसम्बर, 2004 तक बाल संस्कार शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में प्रतिदिन पण्डित सुनीलकुमारजी नाके, निम्बाहेड़ा द्वारा प्रात: समयसार पर एवं रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक पर मार्मिक प्रवचन हुए। दोपहर में आपके द्वारा लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका की कक्षा ली गई; जिसका लाभ स्थानीय समाज को प्राप्त हुआ।

पण्डित सचिनजी शास्त्री एवं पण्डित सतीशजी शास्त्री ने दोनों समय बालकक्षा ली तथा रात्रि में विभिन्न कार्यक्रम कराये। दिनांक 31 दिसम्बर को जिनेन्द्र शोभायात्रा निकाली गई।

विधान एवं उद्घाटन समारोह सम्पन्न

अहमदाबाद (गुज.) : यहाँ श्री सीमन्धर स्वामी दि. जैन मन्दिर पालडी में दि. 10 से 12 दिसम्बर, 04 तक सीमन्धर पंचकल्याणक विधान एवं यागमण्डल विधान का आयोजन हुआ।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा सम्पन्न कराये गये।

इस अवसर पर श्री सीमन्धर स्वाध्याय भवन, श्री कुन्दकुन्द कहान स्वाध्याय भवन, श्री वीतराग-विज्ञान पाठशाला भवन तथा 12 फीट के स्वर्णपुरी (सोनगढ़) दर्शन के भव्य चित्र का उद्घाटन किया गया।

विमोचन एवं वेदी शिलान्यास सम्पन्न

दिल्ली : यहाँ आत्मसाधना केन्द्र में दिनांक 9 जनवरी, 2005 को श्री दि. जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट के तत्त्वावधान में आयोजित श्री 1008 आदिनाथ दि. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की आमंत्रण पत्रिका का विमोचन श्री बाबूराम शीतलप्रसादजी जैन के करकमलों से सम्पन्न हुआ। झण्डारोहण श्री प्रेमकिशनजी जैन, नजफगढ़ ने किया।

समारोह के अध्यक्ष डॉ. सुलेखचन्द जैन अमेरिका एवं मुख्यअतिथि डॉ. साहिबसिंह वर्मा (पूर्व केन्द्रीय श्रममंत्री, भारत सरकार) थे। संचालन पण्डित संदीपजी शास्त्री ने किया।

इस प्रसंग पर पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के प्रवचन के अतिरिक्त पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित बाबूलालजी जैन, पण्डित राकेशजी शास्त्री, पण्डित ऋषभजी शास्त्री एवं पण्डित अमितजी शास्त्री का सान्निध्य मिला।

इस अवसर पर भगवान श्री भरतजी की वेदी का शिलान्यास श्री सुमतिकुमारजी सेठिया परिवार द्वारा एवं भगवान श्री बाहुबलीजी की वेदी का शिलान्यास श्री वैजयेन्द्र जैन परिवार द्वारा किया गया। अयोध्यानगरी में भूमिपूजन कर्त्ता श्री त्रिलोकचन्द जैन भारतनगर थे। प्रात: श्री सम्मेदशिखर विधान का आयोजन हुआ।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित सुनीलजी 'धवल', पण्डित संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा एवं पण्डित संजीवजी जैन उस्मानपुर ने सम्पन्न कराये। **– आदीश जैन**

रविवारीय गोष्ठियों का आयोजन

जयपुर : यहाँ श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय द्वारा आयोजित रविवारीय गोष्ठियों की शृंखला में दिनांक 12 दिसम्बर, 2004 को **जैनाभासी मिथ्यादृष्टि** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया; सभा की अध्यक्षता डॉ. प्रेमचन्दजी रांवका जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में आशीष जैन जबेरा एवं रविन्द्र काले को पुरस्कृत किया गया। सभा का संचालन शीतल आलमान ने किया।

इसी शृंखला में दिनांक 26 दिसम्बर, 2004 को **जैन श्रमण का स्वरूप** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया; जिसकी अध्यक्षता डॉ. पी.सी. जैन, जैन अनुशीलन केन्द्र (राजस्थान यूनिवर्सिटी) ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में नितिन जैन खडैरी एवं रविन्द्र महाजन चुने गये। सभा का संचालन अनन्तवीर जैन ने किया।

इसी शृंखला में शनिवार, दिनांक 1 जनवरी, 2005 को **छहढ़ाला : समयसार का एक रूप** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया; सभा की अध्यक्षता श्रीमती कमलाजी भारिल्ल, जयपुर ने की। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में कु. परिणति पाटील एवं बी. संतोष को पुरस्कृत किया गया। सभा का संचालन नवीन जैन ने तथा संयोजन विक्रान्त पाटनी ने किया।

महाराष्ट्र एवं म.प्र. की 53 पाठशालाओं का निरीक्षण

श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक पण्डित अनिलकुमारजी बेलोकर सुलतानपुर द्वारा महाराष्ट्र एवं मध्यप्रदेश की 53 पाठशालाओं का निरीक्षण किया गया। सभी स्थानों की पाठशालाओं का निरीक्षण करके पण्डितजी ने उचित मार्गदर्शन दिये, अनेक स्थानों पर बन्द एवं निष्क्रिय पाठशालाओं को सक्रिय किया। महाराष्ट्र के सोलापुर आदि 13 स्थानों पर नवीन पाठशालायें प्रारंभ की गई। जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान के अनेक सदस्य बने। महती धर्म प्रभावना हुई।

ज्ञातव्य है कि इसके पूर्व भी आपके द्वारा मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, राजस्थान की लगभग 60 पाठशालाओं का निरीक्षण किया जा चुका है।

विद्यालय पाठ्यक्रम में जैनदर्शन विषय स्वीकृत

मध्यप्रदेश शासन द्वारा संस्कृत प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से गठित म.प्र. संस्कृत शिक्षा बोर्ड ने संस्कृत पाठशालाओं के छठवीं से बारहवीं तक के विषयों में वैकल्पिक विषय के रूप में जैनदर्शन को शामिल किया है। इसके अन्तर्गत इष्टोपदेश, परीक्षामुख, रत्नकरण्डश्रावकाचार, तत्त्वार्थसूत्र, न्यायदीपिका, द्रव्यसंग्रह एवं आलापपद्धति जैसे ग्रन्थों को शामिल किया गया है।

इस योजना के अन्तर्गत म.प्र. के जैन समाज के संगठित, शैक्षिक-सामाजिक संस्थायें अपने विद्यालयों में इस पाठ्यक्रम को लागू कर सकती है। जैनसमाज की पाठशालायें भी इस योजना का लाभ ले सकती हैं। इसके प्रचार-प्रसार हेतु राज्य सरकार द्वारा विकास गति की समीक्षा कर निश्चत आर्थिक अनुदान देने का भी प्रावधान रखा गया है।

इस योजना की विस्तृत जानकारी हेतु आप डॉ. राजेशजी शास्त्री, विदिशा से मोबाईल नं. 9827311795 पर अथवा पण्डित विरागजी शास्त्री, 702, फूटाताल, जबलपुर से फोन नं. 0761-5040152, 3090579 पर सम्पर्क कर सकते हैं। **- विराग शास्त्री**

सिद्धचक्र महामण्डल विधान सानन्द सम्पन्न

मन्दसौर (म.प्र.) : यहाँ श्री शान्तिनाथ दि. जैन मन्दिर, गोल चौराहा में दि. 11 से 19 दिसम्बर, 04 तक श्री सुरेश गाँधी परिवार द्वारा सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन हुआ।

कार्यक्रम में जयपुर से पधारे पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने प्रात: प्रवचनसार परमागम की 80 वीं गाथा के आधार पर सच्चे देव एवं उनकी पूजन-भक्ति का यथार्थ स्वरूप समझाया। रात्रि में आपके द्वारा सिद्धचक्र विधान की जयमाला पर मार्मिक प्रवचन हुये। आपके प्रवचनों के पूर्व प्रात: एवं रात्रि में पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा एवं पण्डित विरागजी शास्त्री के व्याख्यानों का लाभ मिला। सायंकाल श्रीमती कमलाबाई भारिल्ल द्वारा छहढाला विषय पर प्रौढ़ कक्षा ली गई।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित विरागजी शास्त्री के नेतृत्व में पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल एवं पण्डित अभिनयजी शास्त्री द्वारा सम्पन्न कराये गये।